



# विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. (M) NS (C) 36

वर्ष ११ • वम्बई • बुद्धवर्ष २५२५ • भाद्रपद पूर्णिमा [शक] • दि. १३-९-१९८१ • अंक ३

## समाधि-कथा

मन किसी भी आलंबन पर टिक जायेगा तो ध्यानस्थ हो ही जायेगा। एकाग्र हो ही जायेगा। अचंचल हो ही जायेगा। परन्तु चित्तकी एकाग्रता मात्र ही सम्यक् समाधि नहीं है, उत्तम समाधि नहीं है। सम्यक् समाधिके लिए चित्तका कुशल होना आवश्यक है, निष्पाप होना आवश्यक है। कुशल चित्तकी एकाग्रताका नाम ही समाधि है। “कुशलचित्तेकगता समाधि”।

चित्तका समाधान ही तो समाधि है। समाधान माने समतामें आधान, समतामें स्थापित। विषम आलंबन चित्तको समतामें स्थापित नहीं कर सकता। वह तो चित्तके संतुलन को बिगाड़ेगा ही। इसीलिए कुशल चित्तकी एकाग्रताको ही समाधान मानना चाहिए, सही समाधि मानना चाहिए।

रागमय चित्त कुशल नहीं है। द्वेषमय चित्त कुशल नहीं है। मोहमय चित्त कुशल नहीं है। जहां राग द्वेष अथवा मोहका आलंबन लेकर चित्तको एकाग्र किया जायेगा, वहाँ एकाग्रता तो आ जायेगी, समाधान नहीं आयेगा। ऐसी एकाग्रता सम्यक् नहीं है, शुद्ध नहीं है। उस एकाग्रतामें हमारा कल्याण निहित नहीं है। राग, द्वेष और मोह पर आलंबित एकाग्रता अकुशल चित्तकी तल्लीनता है, जो कि कैसे कल्याणकारी हो सकती है ?

चूहेके बिल पर अपना सारा ध्यान लगाए हुए बिल्ली पूर्णतया एकाग्रचित्त हो जाती है। अपने आलंबन पर ध्यानस्थ हो जाती है। मछलीकी खोजमें तालाबके किनारे एक टांग पर खड़ा हुआ बगुला पानीकी ओर ध्यान लगाए पूर्णतया एकाग्रचित्त हो जाता है। उसे और किसी बातकी सुष-बुष नहीं रहती। यह चूहे और मछलीके प्रति रागसे लिप्त हुए मनका एकाग्र होना है, जो कि सम्यक् समाधि नहीं है। ऐसी कोई भी समाधि सम्यक् नहीं, शुद्ध नहीं।

इसी प्रकार अपने दुश्मनकी ताकमें छिपकर बैठा हुआ सैनिक दुश्मनकी खाई पर ध्यान लगाए हुए पूर्णतया एकाग्रचित्त है। जैसे ही दुश्मनका सिर खाईके ऊपर उठे, वह उसे गोली मार दे। इसी प्रकार किसी हिंस पशुकी ताकमें पूरा ध्यान लगाए हुए एक शिकारी अपनी दूनली बंदूक संभाले बैठा है उसका चित्त पूर्णतया एकाग्र है। जैसे ही शिकार दिखा कि गोली मार दी। इस प्रकार द्वेषमयी हिंसासे

## धम्म वाणी

अतीतानुधावनं चित्तं,  
विकल्पानु पतितं समाधिस्स परिपन्थो ।  
अनागतं पटिकंखनं चित्तं,  
विकम्पितं समाधिस्स परिपन्थो ॥

...पटिकंमिधामग्गो-१३/२/८

अतीतकी ओर दौड़नेवाला विक्षिप्त चित्त समाधिका शत्रु है, मार्ग-अवरोधक है। भविष्यकी आकांक्षासे प्रकम्पित हुआ चित्त समाधिका शत्रु है, मार्ग-अवरोधक है।

दूषित चित्त एकाग्र तो है, परन्तु वह कुशलचित्त नहीं है। अतः ऐसे चित्तकी एकाग्रता सम्यक् समाधि नहीं, शुद्ध समाधि नहीं।

किसी मादक पदार्थका सेवनकर गहरे नशेमें डूबा हुआ व्यक्ति उस नशेमें ही तल्लीन हो गया है, चित्तकी एकाग्रता प्राप्त कर ली है। वह प्रगाढ़ निद्रामें सोए हुए के सामान प्रसुप्त है। उसे बाहर-भीतर का कोई होश नहीं। इसी प्रकार वह व्यक्ति एल एस डी जैसे रसायन-पदार्थका प्रयोग करके किसी मरीचिका या विषयकी दर्शन करता है और उसमें पूर्णतया तल्लीन हो जाता है। इन दोनों ही अवस्थाओं में वह चित्तकी समता खोता है, संतुलन नष्ट करता है। चित्तकी विषमता पर आधारित मोह-विमूढ़ित एकाग्रता चित्तका समाधान नहीं है, सम्यक् समाधि नहीं है, शुद्ध समाधि नहीं है।

शुद्ध समाधिके लिए किसी प्रकारका भावावेशमय कल्पनाजन्य आलंबन भी उपयुक्त नहीं। इससे चित्तकी शुद्ध समता नष्ट होगी। उसका संतुलन बिगाड़ेगा। चित्त रागजन्य आसक्तियोंमें डूबेगा, आवृत्तामें तल्लीन होगा। एकाग्रता तो आयेगी, पर शुद्धता दूर होगी।

चित्तकी एकाग्रताके लिए आलंबन ऐसा होना चाहिए जो हमें न प्रिय लगानेवाला हो, न अप्रिय। जिसके प्रति हमारे मनमें न राग जागे और न द्वेष तथा साथ ही ऐसा भी हो जो हमें किसी प्रकारकी मोह-निद्रामें डुबानेसे बचाए, आत्म-सम्मोहन और अन्य द्वारा सम्मोहन किए जानेसे बचाए, प्रसुप्ति-कारक ध्यानोसे बचाए, चित्तको सतत जागरूक रख सकनेमें सहायक हो।

बाह्य जगतके स्थूल ऐन्द्रिय सुख तो हमें खूब तल्लीनता दिखाते ही हैं परन्तु अध्यात्मके नाम पर चलनेवाले सूक्ष्म ऐन्द्रिय सुख भी तल्लीनता दिलाते हैं। परन्तु यह तल्लीनता बांधनेवाली होती है। मुक्त करनेवाली नहीं। अतीन्द्रिय सुखके नाम पर प्राप्त हुई सभी ध्यान-समाधियाँ बांधनेवाली होती हैं। आंख बंद रखने पर भी किसी प्रिय मनोरम रूप, रंग, आकार, प्रकाश आदिका दीखना और इसमें चित्तका एकाग्र होना, किसी श्रुति-मधुर शब्द, नाद आदिमें चित्तका एकाग्र होना, किसी ध्राण-मधुर गंध, सौरभ आदिमें चित्तका एकाग्र होना, किसी जिह्वा-मधुर रसके आस्वादनमें चित्तका एकाग्र होना, किसी काया-स्पर्शजन्य सुखद-पुलक सिहरनमें चित्तका एकाग्र होना, दिव्य अनुभूतियोंके नाम पर सूक्ष्म स्तरका राग-रंजन ही है, मोह-बंधन ही है। मुक्तिकी ओर ले जानेवाली सूक्ष्म समाधि नहीं। सम्यक् समाधिके लिए शुद्ध आलंबनके आधार पर चित्त एकाग्रताका अभ्यास करनेवाले किसी साधकको भी इस प्रकार की अतीन्द्रिय अनुभूतियाँ हो जानी स्वाभाविक हैं। परन्तु इन्हें पथ पर आनेवाले मीलके पथरोंकी तरह त्याग कर आगे बढ़ना होगा। कहीं इन्हींको आलंबन मानकर रुक गए तों फिर राग-रंजनमें उलझ जायेंगे। चित्त-विमुक्तिकी अंतिम स्थिति तक पहुँच नहीं पायेंगे। अतः सतर्क रहना होगा कि किसी भी स्तर पर कोई भी ऐसा आलंबन न पकड़ बैठें जो कि हमारे पैरोंकी बेड़ी बन जाय, राह-रोधक दीवार बन जाय।

शुद्ध समाधिके लिए उपयुक्त आलंबन खोजते हुए हमें यह बात भी ध्यानमें रखनी होगी कि कहीं वह आलंबन साधकको किसी संप्रदाय-विशेषके दायरेमें बंदी तो नहीं बनाने लगा। कहीं वह आलंबन किसी संप्रदान-विशेषका कोई रूपमय, रंगमय, शब्दमय प्रतीक-विशेष तो नहीं है जिसे कि ग्रहण करनेमें किन्ही लोगोंको कठिनाई हो, हिचक हो। यह जो शील, समाधि, प्रज्ञा और विमुक्तिका मार्ग है, यह तो सर्वथा सार्वजनीन है, सार्वकालिक है, सार्वदेशिक है। अतः इस मार्ग पर चलते हुए चित्तकी एकाग्रता के लिए जो भी आलंबन चुना जाय, वह भी सार्वजनीन ही हो, सार्वकालिक ही हो। सर्वजन सुलभ हो सर्वजन ग्रहणीय हो।

उपरोक्त अनिवार्यताओंकी पूर्ति करनेवाले अनेक आलंबन लिए जा सकते हैं। हमने अपने ही आश्वास-प्रश्वासको आलंबनके रूपमें चुना है। आश्वास-प्रश्वास भी बिल्कुल शुद्ध। शुद्ध इस मानेमें कि इसके साथ कोई शब्द नहीं जुड़े, कोई नाम नहीं जुड़े कोई जाप नहीं जुड़े, कोई रूप, कोई आकार, नहीं जुड़े। केवल मात्र श्वासके आगमन-निगमन पर सतत जगरूकताका अभ्यास और श्वास भी नैसर्गिक श्वास, स्वाभाविक श्वास। लंबा है तो लंबा, ओछा है तो ओछा, गहरा है तो गहरा, उथला है तो उथला, स्थूल है तो स्थूल, सूक्ष्म है तो सूक्ष्म। नैसर्गिक श्वासको आलंबन बनाते हुए यह बात समझ लेनी होगी कि हम श्वासकी कसरत नहीं कर रहे हैं। अगर कोई कसरत है तो वह मनकी है। श्वास तो केवल मात्र आलंबन है अतः आलंबन जितना स्वाभाविक होगा, उतना ही अच्छा। उसमें की गई छेड़-छाड़ कृत्रिमता पैदा करेगी जो कि नैसर्गिक सत्य-दर्शनमें बाधक होगी। हम नैसर्गिक अभिमुख न होकर पराङ्गमुख हो जायेंगे। विमुख हो जायेंगे।

आखिर चित्तकी एकाग्रताका अभ्यास किसलिए कर रहे हैं महज इसीलिए कि एकाग्र हुआ चित्त इतना सूक्ष्म और तीक्ष्ण हो जाय कि अंतिम पदार्थ सत्यको जिन आवरणोंने ढक रखा है, उनको बांध सके, चीर सके और अध्यात्मको निवारण करके प्रज्ञाचक्षु द्वारा आत्म-साक्षात्कार कर सकनेमें, सत्य साक्षात्कार कर सकने में सहायक सिद्ध हो सके। ऐसी अवस्थामें आलंबनको जितना कम कृत्रिम बनायेंगे और उसे जितना अधिक नैसर्गिक बने रहने देंगे, उतना ही अंधी गलियोंमें भटकनेसे बचेंगे, ऋजु राज पथ पर आरूढ़ रहेंगे।

नैसर्गिक आश्वास-प्रश्वासका आलंबन हमने इसलिए भी अपनाया कि हमारी श्वासकी गतिका मनके विकारोंसे गहरा संबंध है। हम देखते हैं कि जब कभी हमारा मन किन्ही दूषित विकारोंसे विकृत हो उठता है, क्रोध, भय, वासना, ईर्ष्या अथवा अन्य किसी भी दूषित विकारसे आक्रांत हो उठता है तो उस समय हमारा श्वास स्थूल हो जाता है, उसकी गति तीव्र हो जाती है। जैसे-जैसे मन परसे ये विकार दूर होते जाते हैं, वैदे-वैसे श्वासकी गति मंथर और सूक्ष्म होने लगती है। समाधिके पश्चात् हमें प्रज्ञाके क्षेत्रमें उतरते हुए अपने ही मनोविकारोंका यथाभूत निरीक्षण करना होगा और उनके बंधनोंसे मुक्त होना होगा। ऐसी अवस्थामें नैसर्गिक श्वासके इस यथाभूत आवागमनका आलंबन अत्यंत उपादेय है। साधनाके अगले चरणमें यह हमारा सहायक होगा।

स्थूल श्वासका निरीक्षण करते-करते हम देखेंगे कि जैसे-जैसे चित्त एकाग्र हुआ जैसे-वैसे उसकी नैसर्गिक सूक्ष्मतामें भी अभिवृद्धि होने लगी। कभी कभी तो सांस सूक्ष्म बालकी तरह क्षीणकाय हो जायेगा और जैसे बाहर निकलेगा वैसे ही भीतरकी ओर मुड़ जायेगा। कभी स्वतः कम्भककी स्थिति तक पहुँच जायेगा। अतः स्पष्ट है कि यह आलंबन हमें स्थूलता से सूक्ष्मताकी ओर ले जानेवाला है। आगेका जो अज्ञात, अनदेखा क्षेत्र हमें जानना है, देखना है, वह तो इस स्थितिसे भी अधिक सूक्ष्म है, इस कारण भी श्वासोश्वासका आलंबन सही आलंबन है, सार्थक आलंबन है। भीतर ही भीतर जो अनंत उर्मियोंका सागर लहरा रहा है, आंतरिक संवेदनाओंकी सरिता प्रवाहित हो रही है, शरीरके अणु-अणुमें जो असंख्य स्पंदनोंका निरंतर नर्तन हो रहा है, हमें उसका दर्शन करना है। अपने सतत् प्रवाहमान स्वरूपका दर्शन करना है। परन्तु यह सब तो अत्यंत सूक्ष्म अवस्थामें चल रहा है। वहाँ तक पहुँचनेके लिए पहले अपने गतिमान श्वासके इस स्थूल परन्तु अविराम प्रवाहका निरीक्षण आरंभ करना होगा।

जो कुछ भीतर हो रहा है, वह अनायास हो रहा है। शरीर और मनका यह स्वतः संचालित अविरल प्रवाह है। अंतर्जगतकी सृष्टि-प्रलयवाली इस अनायास गतिमान स्थितिका निरीक्षण कर सकनेके लिए एक ऐसा आलंबन चाहिए जो कि सायास और अनायास दोनों प्रकारसे गतिमान होता हो। ताकि उसकी सायास गतिको देख-समझकर तुरंत उसकी अनायास गतिके निरीक्षणका अभ्यास आरंभ कर दें। और यह सांस ही शरीरकी एक ऐसी गति है जिसका संचालन तीव्र या मन्द सायास-संप्रयत्न भी किया जा सकता है। और जो अनायास-अप्रयत्न भी गतिमान है ही।

सायाससे अनायास तक पहुँचने के लिए, नदीके जाने-माने इस तीरसे, अनजाने-अनदेखे उस तीर तक पहुँचनेके लिए हमारा श्वास एक पुलका काम करता है। इसलिए मी इसका आलंबन उपादेय है।

शील, समाधि, प्रज्ञा और विमुक्तका यह मार्ग जिसका कि हमने अभ्यास आरंभ किया है, हमें साधना-क्षेत्रकी उन गहराइयों तक पहुँचता है, जहाँ कि हम सहजभावसे परमार्थ सत्यका साक्षात्कार कर सकें। इसके लिए हमें इस क्षणके यथाभूत सांख्यिक सत्यके निरीक्षणसे अभ्यास आरंभ करना होगा। क्योंकि अंतिम परमार्थ सत्य इस क्षणका सत्य है, बीते हुए क्षणोंका नहीं। बीते हुए क्षणोंकी तो केवल याद मात्र हो सकती है। आने वाले क्षणोंकी केवल कामना, कल्पना मात्र हो सकती है। साक्षात्कार तो वर्तमान क्षणका ही हो सकता है। अतीतके क्षणोंका नहीं, अनागतके क्षणोंका नहीं। अतः परमसत्यके साक्षात्कारके लिए वर्तमान क्षणमें जीनेका अभ्यास करना होगा। वर्तमान क्षणका जो स्थूल सांख्यिक सत्य है, उसीका सावधानीपूर्वक निरीक्षण करते-करते सूक्ष्म सत्त्योंका अनावरण होगा और सूक्ष्मतम स्थितिके भी परे इस क्षणके परम सत्यका साक्षात्कार हो सकेगा। इसके लिए नन्हेंसे नन्हें आगत क्षणमें जी सकनेका अस्यास ही इस साधना का ऋजु-राजपथ है। इस क्षणमें जीनेके अभ्यासके लिए इस क्षण होनेवाली शरीरकी इस स्थूल घटनाके प्रति याने आने अथवा जानेवाली सांसकी जानकारीके प्रति जागरूकता बनाए रखना सीखें। यह अभ्यास करते समय हुए अतीतकी कटु-मधुर यादें मन पर बादलोंकी तरह छाने न पाएँ और न ही अनागतकी कोई कटु-मधुर आशंका या कामना! शुद्ध सांसकी याने यथाभूत सांसके आवागमनकी जानकारी मात्र बनी रहे। अतीत या अनागतकी कटु-मधुर यादें, आशंकाएँ, कामनाएँ राग पैदा करती हैं, द्वेष पैदा करती हैं। क्योंकि वे प्रिय होती हैं अथवा अप्रिय होती हैं। जैसे-जैसे भूत-भविष्यसे संबंधित इन राग-द्वेषमयी यादों और कल्पनाओंसे मुक्त होकर चित्त वर्तमानकी इस सांस लेने या छोड़नेवाली घटना पर स्थित होता है, जैसे-जैसे राग-द्वेषसे छुटकारा पाता है। सांसकी गतिका निरीक्षण करनेमें हमारे मनमें उसके प्रति न कोई प्रिय भाव जागता है, न अभिय। न उसके प्रति आकर्षण होता है, न विकर्षण। न राग होता है, न द्वेष।

शरीरकी इस नैसर्गिक घटनाको महज एक तमाशबीनकी तरह देखना सीखते हैं। भूत और भविष्यके बंधनोंसे मुक्त होकर, राग और द्वेषभी जकड़नसे बाहर निकल कर, इस क्षणमें जीनेका प्रथम प्रयास आरंभ करते हैं। डगमग कदमों पर चलना सीखनेवाले शिशुका सा यह प्रयास और इस दिशामें किया गया निरन्तर अभ्यास हमें एक दिन सुदृढ़, सबल और अडिग कदमोंसे अपनी यात्रा पूरी कर सकने योग्य बनाता है।

बिना सम्यक् समाधि पुष्ट हुए हम इस क्षणकी गहराइयोंमें नहीं उतर सकते। प्रज्ञाके क्षेत्रमें पदार्पण कर नहीं सकते। समाधिको सम्यक्तया पुष्ट करनेके लिए ही चित्तको इस क्षण का प्रत्यक्ष, यथार्थ सांख्यिक, कल्पना-विहीन, निर्दोष आलंबन दें। यही सांसके आवागमनकी जानकारीका आवलंबन है। इसीके सहारे इस क्षणमें जीना सीखते हुए राग-विहीन द्वेष-विहीन, मोह-विहीन कुशल चित्तकी एकाग्रताको पुष्ट करें। काया और वाणीके दुष्चरितोंसे बच

सकनेकी क्षमता पुष्ट करें। प्रज्ञामें पुष्ट होकर दूषित चित्तविकारोंका उन्मूलन करते हुए मानसिक दुष्कर्मोंसे विरत रह सकनेकी क्षमताको पुष्ट करें।

इस प्रकार उपलब्ध हुई शुद्ध समाधि मंगल-प्रदायिनी है। आओ, श्वासके आवागमनके प्रति सजगताका अभ्यास करते हुए समाधिको पुष्ट करें। समाधिके पुष्ट होनेसे शील अधिक पुष्ट होगा तथा शील और समाधिके पुष्ट हो जानेसे प्रज्ञा पुष्ट हो सकेगी। शील, समाधि, प्रज्ञाकी पुष्टिमें ही विमुक्ति है। विकारों से विमुक्ति! दुःखोंसे विमुक्ति! अविद्या-अज्ञानसे विमुक्ति!

सच्चमुच समाधिका पथ मंगलका पथ है! कल्याणका पथ है! शांति सुखका पथ है! विमुक्तिका पथ है!

कल्याण मित्र

स. ना. गो.

## हैदराबादमें बृहत् शिविर

गत २१ से ३१ जुलाई तक १९८८ वाँ शिविर हैदराबादमें सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। दक्षिण-भारतमें लगे अनेक शिविरोंमें यह सबसे बड़ा शिविर था जिसमें २१६ व्यक्तियोंने भाग लिया। हैदराबाद केन्द्रमें सामान्यतः १५० लोगोंकी ही समुचित व्यवस्था हो पायी है। पूर्वानुमान यही था कि १५० से अधिक साधक यहाँ नहीं होंगे परन्तु इस बार अनेकोंको ना कहते कहते भी २१६ आ ही गए। इन सबके लिए केवल निवासकी ही समस्या नहीं थी बल्कि साधना-कक्ष (हॉल) में भी १६० लोग किसी प्रकार बैठाने जा सकते थे। अतः कुछ पुराने साधकोंको आश्रम भूमिके बाहर निवास करते हुए साधना करनी पड़ी। इन्हे सामूहिक साधनाके लिए भी हॉलके बाहर परन्तु सटे हुए दो कमरों एवं बरामदेमें बैठकर ध्यान करना पड़ा।

इस समस्याको देखते हुए शिविरोपरान्त साधकोंकी बैठक हुई और सर्वसम्मतिसे एक उपयुक्त साधना-कक्ष निर्माणकी योजना निश्चित हुई और इस निमित्त उत्सुक साधकोंने मंगल-दान-चेतनासे प्रेरित होकर लगभग एक लाख का अनुदान घोषित किया। इसके लिए अभी ढाई लाख रूपयोंकी और जरूरत होगी। अतः जिन साधकोंमें दानकी चेतना जगे, अपनी शक्ति-सामर्थ्यानुसार निम्न नाम-पते पर दान भेजकर पुण्यार्जनके लाम्बी बन सकते हैं।

विषयज्ञा इन्टरनेशनल मैडीटेशन सेन्टर  
१२.६ कि. मी. नागार्जुन सागर रोड, कुसुम नगर,  
हैदराबाद - ५०० ०३५ आंध्र प्रदेश

## इगतपुरी में स्वयं शिविर

स्व. शि. क्र.	८८	दि. ८-९-८१	से	१९-९-८१	तक
, ,	८९	,, १९-९-८१	से	३०-९-८१	तक
, ,	९०	,, ३०-९-८१	से	११-१०-८१	तक
, ,	९१	,, ११-१०-८१	से	२२-१०-८१	तक

संपर्क - व्यवस्थापक, विषयज्ञा विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि,  
इगतपुरी-४२२ ४०३ (नासिक) फोन नं. - ७६

## भावी कार्यक्रम

लघु शिविर —	इगतपुरी, ( केवल पुराने साधकों के लिए )	दि. १-११-८१ से ८-११-८१ तक	( हिन्दी )
संपर्क —	व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३. ( नासिक )	महाराष्ट्र, फोन नं. इगतपुरी-७६.	
शिविर क्रमांक २०३	जयपुर, ( विपश्यना केन्द्र, धम्मयली, गल्लाबी रोड, )	दि. २१-११-८१ से २-१२-८१ तक	( हिन्दी )
संपर्क —	श्री श्यामसुन्दर मूंदडा, जी-१/ए, अशोक मार्ग, सी-स्कीम, जयपुर-३०२ ००१,	फोन नं. ६३३२२-६३३६६	तार-डॉली
शिविर क्रमांक २०४	इगतपुरी	दि. ५-१२-८१ से १६-१२-८१ तक	( हिन्दी )
” ” २०५	”	दि. २३-१२-८१ से ३-१-८२	” (अंग्रेजी)
आचार्य-स्वयं-शिविर	”	दि. ५-१-८२ से २०-१-८२ तक	( प्रतिबंधित )
( विशेष —	इस बीच विद्यापीठ पूरी तरह बंद रहेगी और कोई भी व्यक्ति आचार्यसे नहीं मिल सकेगा )		
शिविर क्रमांक २०६	इगतपुरी	दि. २०-१-८२ से ३१-१-८२ तक	( हिन्दी )
” ” २०७	”	” ३-२-८२ से १४-२-८२ तक	( अंग्रेजी )
संपर्क :	व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३ (नासिक)	फोन नं. इगतपुरी-७६	

सूचना : १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके। २) अंग्रेजी शिविर में हिन्दी-प्रवचन सुनने लिए हिन्दी टेप की सुविधा उपलब्ध रहती है। ३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं। उनका कड़ाई से पालन कर लें तो ही भाग लेना चाहिए।

तार : स्ट्रेट  
फोन : ३७८०२/६२६९५  
डैकन स्टेनलैस स्टील अण्ड वायर इन्डस्ट्रीज़  
१९/४ आजमाबाद-हैदराबाद-५०० ०२०  
की मंगल कामनाओं सहित

## दूहा धरम रा

सदाचार अर सील की, व्याख्या दयी सुनाय ।  
पण मन बस होये बिना, पालन कर्यो न जाय ॥  
खूटी कर ली नासिका, करी सांस की डोर ।  
चंचल चित को बांदरो, बांध लियो इक ठोर ॥  
मन ही दुरजन मन सुजन, मन बैरी मन मीत ।  
मन सुधर्यां सै सुधरसी, कर मन परम पुनीत ॥  
पाप मना ही नीपजै, मन ही धरम समाय ।  
मन सुधर्यां ही मुक्ति है, बिगड्यां बंधतो जाय ॥  
दोरो मत रह बावळा ! दोरै मन दुख होय ।  
सोरै मन सुख नीपजै, सोरै मंगल होय ॥  
चित्त खं ही दुख नीपजै, चित ही सुख की खान ।  
चित सुधर्यां मंगल हुवै, चित सुधर्यां कल्याण ॥

## दोहे धर्म के

धाणी तो संयत भली, संयत भला शरीर ।  
पर जो चित संयत करे, वही संयमी वीर ॥  
रण सहस्र योद्धा लड़े, जीते युद्ध हजार ।  
पर जो जीते स्वयं को, वही शूर सरदार ॥  
मनके कर्म सुधार ले, मन ही प्रमुख प्रधान ।  
कायिक वाचिक कर्म तो, मन की ही संतान ॥  
जितनी हानि न कर सके, दुश्मन द्वेषी दोग ।  
अधिक हानि निज मन करे, जब मन मैला होय ॥  
मां बापू प्रिय बंधु जन, भला करें सब कोय ।  
अधिक भला निज मन करें, जब मन उजला होय ॥  
जो चाहे बंधन खुलें, मुक्ति दुखों से होय ॥  
वशमें कर ले चित्त को, चित के वश मत होय ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट,  
बंबई-२३. टेलीफोन : ३१३५१०. • मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपूर, नासिक-४२२ ००७. टेलिफोन : ८८२५१. •  
पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रु. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रु. २५०/- • वार्षिक शुल्क रु. ५/-, आजीवन शुल्क रु. ५१/-

विपश्यना ”

पो. रजि. नं (M) NS (C) 36

प्रेषक

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट

विपश्यना विश्व विद्यापीठ

धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.

नासिक, महाराष्ट्र)

Licence No. NS 18  
Licensed to post without pre-payment